मेरे अध्यात्मगुरु डॉ. फतहसिंह

डॉ. मोहनलाल गुप्ता
पूर्व विभागाध्यक्ष (संस्कृत) एवं उपाचार्य
राजकीय स्नाकोत्तर महाविद्यालय - बूँदी

गुरुवर्य डॉ. फतहसिंह के व्यक्तित्व में आध्यात्मिक जीवन दर्शन की प्रधानता थी । उनका असत्य रूप अन्तकार स्वरूप, मृत्युस्वरूप, क्षणभंगुर एवं दु:खद शरीर में विश्वास न होकर सत्यस्वरूप, ज्ञानस्वरूप एवं आनन्द स्वरूप आत्मा में दृढविश्वास था। जीवन्मुक्ति के अक्षय आनंद को प्रदान करने वाले आत्मबोध की प्राप्ति की साधना में वे सर्वदा रत रहते थे। श्रीमद्भगवद्गीता के अध्ययन, चिंतन एवं मनन एवं अनुशीलन के द्वारा उन्हें आत्मबोध हो गया था, इसलिये उनका व्यक्तित्व तमोगुणजन्य अज्ञान के प्रभाव से रहित था। भारतीय ज्ञान एवं विज्ञान के अक्षय स्रोत वेदों का निरंतर अनुशीलन करके उन्होंने जीवन के प्रति भौतिक दृष्टिकोण का परित्याग कर आध्यात्मिक दृष्टिकोण को प्रधानता प्रदान की थी। इसी अभिप्राय को मैंने गीता के अनुष्टुप् छंद में स्वरचित संस्कृत श्लोकों में प्रस्तुत कर सद्गुरुदेव को नमन किया है-

"स्वस्मिन्करोति विश्वासं, शरीरे तु कदापि न।
आत्मबोधे इति यस्य, सद्गुरवे नमो नम:॥
गीताध्ययनद्वारेण, यस्मिन् बोधो हि जायते।
तमोगुणप्रभावो न, सद्गुरवे नमो नम:॥
अनुशीलनद्वारेण, वेदानां येन सर्वदा।
दत्ता आध्यात्मिकी दृष्टि:, सद्गुरवे नमो नम:॥"

वर्तमान समय में मनुष्य भौतिक मूल्यों से प्रभावित होने के कारण क्षणभंगुर सांसारिक लाभ तथा सांसारिक सम्मान के कुचक्र में फँस कर आत्मलाभ एवं आत्मसम्मान से वंचित होता हुआ दारुण दु:खमय जीवन व्यतीत कर रहा है। उसकी यह दयनीय स्थिति अपने स्वाभाविक सच्चिदानंद स्वरूप को भुला देने के कारण हुई है। मनुष्य जीवन की सार्थकता आध्यात्मवाद के अनुशीलन द्वारा अपने अक्षय आनंदमय स्वरूप को पहचान कर दिव्य

जीवन व्यातीत करने में है। राजकीय महाविद्यालय, कोटा के पूर्व प्राचार्य डॉ. फतहसिंह का आध्यात्मिक व्यक्तित्व वर्तमान समय में पूर्णतया प्रासंगिक एवं उपादेय है।

यहाँ उनके आद्यात्मिक व्यक्तित्व की विभिन्न विशेषताओं का संक्षेप में उल्लेख किया जा रहा है-

(1) भगवद्दृष्टि

संसार के सभी प्राणियों एवं पदार्थों में भगवान् के दर्शन करना ही भगवद्दृष्टि कहलाती है। "जड़ चेतन जे जीव जग, सकल राममय जानि" यह कह कर गोस्वामी तुलसीदास जी ने इसी भगवद्दृष्टि की ओर संकेत किया है। श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान् श्रीकृष्ण ने- "वासुदेव: सर्वम्" इस कथन द्वारा अर्जुन को भगवद्दृष्टि का उपदेश दिया है। गुरुवर्य डॉ. फतहसिंह ने भगवद्दृष्टि के इस उपदेश को अपने जीवन में आत्मसात् कर लिया था। उनका दृढ विश्वास था, कि आत्मचिंतन ईश्वरोपासना, सत्संग, प्राणायाम, ध्यानादि आध्यात्मिक उपायों के द्वारा सांसारिक पदार्थों के दु:खद स्पर्श को भगवत्स्पर्श में पर्तिवर्तित कर अक्षय आनंद की अवस्था प्राप्त की जा सकती है।

(2) दिव्य दैवी दृष्टि

आज जब भौतिकवाद के प्रभाव से नारी मात्र के प्रति देहदृष्टि अथवा वासनादृष्टि होने के कारण समाज में अपहरण, बलात्कार, हत्या एवं आत्महत्या जैसे अपराधों में निरंतर वृद्धि हो रही है, आदिशक्ति के उपासक श्रद्धेय डॉ. फतहसिंह जी दैवी दृष्टि के आध्यात्मिक संदेश के साथ अक्षय आनंद की अनुभूति करा कर जीवन को सार्थकता प्रदान करने में पूर्णतया समर्थ थे। एतदर्थ नारीमात्र को रामायण की सीता, भागवत की राधा, शिवपुराण की पार्वती, विष्णुपुराण की लक्ष्मीदेवी, भागवत की सावित्री एवं वेदों की गायत्री की दृष्टि से देखना होगा। डॉ. सिंह का प्रत्येक उद्बोधन "देवियों एवं सज्जनो : इस सम्बोधन के साथ आरम्भ होता था। इस दैवी दृष्टि के विषय में कतिपय स्वरचित श्लोक दृष्टव्य हैं :-

"सर्वभूतेषु या नारी, सीतारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नम:॥
सर्वभूतेषु या नारी, लक्ष्मीरूपेण संस्थिता॥
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नम:॥

सर्वभूतेषु या नारी , सरस्वती च संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥
सर्वभूतेषु या कन्या, दुर्गारूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥"

(3) अभेद दृष्टि

"समस्त कर्म ईश्वर के कर्म है एवं समस्त व्यक्ति ईश्वर की संतान है" यही अभेद दृष्टि है। कर्मगत भेददृष्टि में कर्म से सम्बंधित छोटेपन तथा बड़ेपन की संकुचित मनोवृत्ति हमारे अंत:करण में विद्यमान रहती है। इसी प्रकार व्यक्तिगत भेददृष्टि से जाति, कर्म, पद, जन आदि की दृष्टि से व्यक्तिगत भेद की क्षुद्र मनोवृत्ति स्थान बना लेती है। यह भेददृष्टि संक्रामक रोग की तरह फैलते हुए भौतिकवाद की देन है। पंचभूतों से निर्मित संसार के चिंतन का परित्याग कर निरंतर भगवच्चिंतन के द्वारा इस अभेददृष्टि की अवस्था को प्राप्त किया जा सकता है। आदरणीय डॉ. फतहसिंह इस अभेददृष्टि के कारण ही "अजातशत्रु" कहलाते थे। विद्वज्जन उनकी अभेददृष्टि से प्रभावित होकर उन्हें सहज एवं स्वाभाविक सम्मान प्रदान करते थे।

(4) समत्व दृष्टि

जिस अवस्था में हमारी मनोवृत्ति पर सुख की अनुकूलता एवं दु:ख की प्रतिकूलता का प्रभाव नहीं होता, उसे समत्व दृष्टि की अवस्था कहा जाता है। यह अवस्था अक्षय आनंद, जीवन्मुक्ति एवं चरम शान्ति की अवस्था है। इस अवस्था में स्थित होने के कारण श्रद्धेय डॉ. फतहसिंह ने विभिन्न राजकीय महाविद्यालयों में प्राचार्य के रूप में कार्य करने के दौरान असामाजिक तत्त्वों का निर्ममता, साहस एवं शौर्य से सामना किया एवं अंत में उन असामाजिक तत्त्वों को ही झुकना पड़ा था।

(5) गुण दृष्टि

मानवमात्र गुणों एवं अच्छाइयों से परिपूर्ण है, यही गुणदृष्टि है। यह गुणदृष्टि गुरुवर्य डॉ. फतहसिंह के आध्यात्मिक व्यक्तित्व की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता थी। निरंतर मनन, चिन्तन एवं परहित सम्पादन के कारण उनके विचार सकारात्मक एवं रचनात्मक थे। वे अपने व्याख्यान के दौरान दूसरों के गुण देखने के लिये ही प्रेरित करते हुए

भर्तृहरि के "नीतिशतक" के इस श्लोक का पाठ करते थे-

"मनसि वचसि काये पुण्यपीयूषपूर्णा:।
त्रिभुवनमुपकारश्रेणिभि: प्रीणयन्त:॥
परगुणपरमाणून्पर्वतीकृत्य नित्यं,
निजहृददि विकसन्त: संति संत: कियन्त:॥"

वर्तमान समय में भौतिक मूल्यों के निरंतर चिन्तन के कारण मानवस्वभाव में दोषदृष्टि आविर्भूत हो रही है, जिससे मानव-मन एवं चरित्र ये दोनों प्रदूषित हो रहे हैं, अत: वर्तमान में श्रद्धेय डॉ. फतहसिंह के व्यक्तित्त्व की उपर्युक्त विशेषता मानव मात्र का मार्गदर्शन करने में समर्थ है।

(6) साधनात्मक भौतिक दृष्टि

मौलिकता, मानवता एवं सज्जनता की उपलब्धि आध्यात्मिक साधना के बिना असम्भव कार्य है। मानसिक शांति, मानसिक प्रसन्नता एवं मानसिक गम्भीरता के लिये मन को चिंतनरूपी समुद्र में डुबो कर मौलिकता रूपी ज्ञान के मोती निकालना शोधकार्य का मुख्य उद्देश्य है। गुरुवर्य डॉ. फतहसिंह इस कला में पारंगत थे। वे सर्वदा चिंतनमग्न रह कर शोधविषयक नवीन अवधारणाओं का अन्वेषण करते रहते थे। डॉ. फतहसिंह मेरे शोधनिर्देशक रहे हैं, साथ ही राजकीय महाविद्यालय कालाडेरा (जिला-जयपुर) में मेरे प्राचार्य भी थे। शोधविषयक चर्चा के दौरान वे बतलाया करते थे, कि ज्ञान का विस्तार करने वाला शोधप्रबंध एक मुक्ताहार के समान होता है, जिसमें मौलिक तत्त्व मध्यमणि का कार्य कर प्रत्येक अध्याय को प्रकाशित करता रहता है। इस प्रकार उन्होंने अपने शोधकार्य को भी आध्यात्मिक साधना का अंग बना कर मानवजीवन के उद्देश्यरूपी अक्षय आनंद की प्राप्ति से जोड़ दिया था।

(7) आत्मविश्वास' तथा 'आत्मसम्मान' द्वारा 'आत्मलाभ' में रुचि

वर्तमान समय में हम रति के लिये सांसारिक भोगों, तृप्ति के लिये स्वादिष्ट भोजन एवं संतुष्टि के लिये वाक्य-धन को स्वीकार कर जीवन को अक्षय आनंद से वंचित कर रहे हैं। ऐसे समय श्रीमद्भगवद्गीता के तृतीय अध्याय का निम्नलिखित श्लोक विचारणीय है-

"यस्त्वामरतिरेव स्यादात्मतृप्तस्य मानवः।

आत्मन्येव च संतुष्टस्तस्य कार्यं न विद्यते॥" (गीता ३। १७)

अर्थात् जो मनुष्य आत्मा में ही रमण करने वाला और आत्मा में तृप्त तथा आत्मा में ही संतुष्ट हो, उसके लिये कोई कर्त्तव्य नहीं है। इस श्लोक के अनुसार आत्मा में निहित अक्षय आनंद, अक्षय तृप्ति एवं अक्षय संतुष्टि की शक्तियों में विश्वास करना ही 'आत्मसम्मान' कहलाता है। 'आत्मविश्वास' एवं 'आत्मसम्मान' इन दोनों के द्वारा ही 'आत्मलाभ', 'परमलाभ' अथवा जीवन्मुक्ति के अक्षय आनंद की अवस्था प्राप्त हो सकती है, जो कि मनुष्यजीवन का एकमात्र उद्देश्य है। गीता का नियमित अध्ययन, चिंतन एवं मनन करने के कारण श्रद्धेय डॉ. फतहसिंह ने इस अवस्था को प्राप्त कर लिया है।

गुरुवर्य डॉ. फतहसिंह के आध्यात्मिक व्यक्तित्त्व की उपर्युक्त विशेषताओं के संक्षिप्त विवरण से यह स्पष्ट होता है, कि आज जब भौतिकवाद समस्त विश्व में सबसे बड़े रोग एवं सबसे बड़ी समस्या के रूप में उभर कर सामने आया है, तब भी आप अपने व्यक्तित्त्व द्वारा मानवमात्र को मानव जीवन के परम लक्ष्य 'आत्मलाभ' अथवा 'परमात्मलाभ' के लिये आवश्यक दिव्यजीवन जीने की प्रेरणा देने में पूर्णतया समर्थ आदर्श महापुरूष के रूप में हमारे समक्ष विद्यमान हैं।